होते हों, हमारी अर्थ-व्यवस्था निर्मित होती हो तथा देश की ग़रीबी को दूर करने में सहायता मिलती हो, तो हमें उसे अस्वीकृत नहीं करना चाहिये।

संसद् में वैदेशिक नीति पर चर्चा होते समय सब दलों में अधिकतम ऐक्य होना चाहिये। हम यह नहीं चाहते कि विदेशी नीति पर मतभेद के वातावरण में चर्चा हो। किन्तु इस के लिये यह आवश्यक है कि आप उन लोगों की बात पर ध्यान दीजिये जो यहां जनता का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। अपने घरेलू मोर्चे को मज़बूत बनाइये। देश की आर्थिक समस्याओं का सब से पहले हल कीजिये। लाखों उजड़े हुए व्यक्तियों को बसाइए। कुछ समय के लिये बाहरी संसार को भुला दीजिये।

कुछ शब्द मैं तिब्बत के बारे में और कहना चाहता हूं। चीन ने बड़ी शान्ति के साथ तिब्बत पर अधिकार कर लिया है। चीनियों के प्रति मेरे हृदय में बड़ी प्रशंसा का स्थान है। किन्तु तिब्बत की गुलामी बड़ी उदासीनता के साथ हमारे प्रधान मंत्री ने स्वीकार कर ली है। चीन द्वारा जो नये मानचित्र तैयार किये गये हैं उनमें भूटान को भी चीन के भाग के रूप में दिखाया गया है। यह सब अच्छे आसार नहीं हैं और इस को हमें सुलझाना ही होगा। यूनीशिया, कोरिया तथा अन्य देशों के मामलों में हम बाद को रुचि दिखलायेंगे। पहले अपने घरेलू मोर्चे को तो मज़बूत करें तथा अपनी मातृभूमि की एकता और सम्मान के लिये सब लोग मिल कर खड़े हो जायें।

श्री जवाहरलाल नेहरू : कल से विदेशी नीति पर विचार हो रहा है। बाद विवाद के दौरान में अनेक पहलुओं का ज़िक्र किया गया है और मैंने सब भाषणों को बड़े ध्यान-पूर्वक सुना है।

हमारी सरकार की विदेशी नीति का समर्थन भी किया गया है और कुछ माननीय सदस्यों ने उसकी आलोचना भी की है। आज की दुनिया में चारों ओर समस्या ही समस्यायें दिखाई देती हैं। चाहे आप कोरिया जाइए या ट्यूनीशिया, इरान जाइए या मिस्र, अमरीका जाइए या जर्मनी— सब जगह समस्यायें हैं और किसी भी समस्या का समाधान नहीं हुआ है तथा प्रत्येक समस्या एक दूसरे से सम्बद्ध है। समस्त विश्व में एक विषमय और जटिल परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है। संसार की इन समस्याओं का समाधान एक महान उत्तरदायित्व है— सभी के लिये चाहे व्यक्ति हो अथवा सरकार अथवा यह सदन। हम सब को इन समस्याओं पर ग़ौर करना है और यह सोचना है कि उन के लिये क्या कर सकते हैं। हम उन का निर्णय नहीं कर सकते। यह महान देश भारत भी विश्व की समस्याओं का निर्णय नहीं कर सकता। किन्तु फिर भी, हम उस निर्णय में सहायक हो सकते हैं।

कुछ माननीय सदस्यों ने कहा कि हमारी वैदेशिक नीति केवल मेरी ही स्वेच्छा तथा मर्ज़ी के अनुसार निर्मित होती है। मेरे लिये वे कुछ भी कहें, कोई बात नहीं है; किन्तु जब वे इस देश की वैदेशिक नीति को केवल मेरी ही स्वेच्छा और मर्ज़ी की चीज़ बतलाते हैं तो मुझे कहना पड़ता है कि यह गलत बात है। जैसा मैं बतला चुका हूं हमारी नीति हमारे द्वारा विगत काल में की गयी घोषणाओं पर आधारित है। मैं या कोई अन्य व्यक्ति, स्वयं अपने आप को नहीं परख सकता। यह तो दूसरों का काम है। किन्तु जहां तक मैं समझता हूं हम अंतर्राष्ट्रीय मामलों में जिन सिद्धांतों पर चले हैं, उनसे हमकभी भी विचलित नहीं हुए हैं।

राष्ट्रमण्डल में हमारे रहे आने पर कुछ सदस्यों ने कटु आलोचना की है। मुझे

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

आश्चर्य होता है कि वे बदली हुई परिस्थितियों को नहीं समझते। उन्होंने धार्मिक कट्टरपन्थियों की तरह एक बात ले ली हैं और उसी राग को अलापते जाते हैं, चाहे परिस्थितियां कितनी ही क्यों न बदल गयी हों।

शान्ति का मामला लीजिये। हम सब शान्ति चाहते हैं किन्तु, दुर्भाग्यवश संसार के बड़े बड़े राष्ट्र यद्यपि वे सब शान्ति की बात करते हैं फिर भी शान्ति शब्द को कुछ देशों में खतरनाक शब्द समझा जाता है। यदि आप वहां शान्ति की बात करें तो आपकी देशनिष्ठा पर सन्देह होने लगता है। अन्य दूसरे कुछ देशों में शान्ति का ऐसा रुख अलापा जाता है कि उसे सुन सुन कर कान बहरे हुए जाते हैं और लगता है कि युद्ध गान गा रहे हों। यदि शान्ति शान्ति चिल्लाते हुए आप युद्ध की तयारी कर रहे हों तो यह बड़ी गलत बात है उस शान्ति के लिये जो इस कदर बखानी जाती है। क्या बैठकों और सम्मेलनों से आप को शान्ति प्राप्त हो जायेगी। शान्ति सम्मेलन किए जा रहे ह और लोग वहां जा को दौड़ते है, मैं नहीं जानता कि उन का खर्चा कौन भरता है। दूसरे लोगों अथवा दूसरे देशों के खर्चे पर इस प्रकार लोगों का दौड़ना मुझे सम्मानित नहीं जान पड़ता। किन्तु क्या इस प्रकार आप को शान्ति मिल जायेगी? क्या सड़क के किनारे खड़े होकर 'शान्ति, शान्ति' चिल्लाने से शान्ति मिल जायेगी?

हम बच्चे नहीं हैं। हमें एक परिपक्व राष्ट्र की तरह कार्य करना चाहिये। साम्राज्यवाद इस जमाने में समाप्त हो चुका है। आज का साम्राज्यवाद पुराने साम्राज्यवाद से, जिसकी कुछ माननीय सदस्य बातें करते हैं, बिल्कुल भिन्न है। अच्छा होगा वे पहले आज के साम्राज्यवाद का रूप समझें और यह भी जानें कि इसका विकास कहां हो रहा है।

निस्सन्देह, अब भी कुछ साम्राज्यवादी और औपनिवेशिक देश मौजूद हैं। ये देश जो भी हों, इंग्लैण्ड, हौलैंड, बेलजियम अथवा फ्रांस—उनके अंतर्गत जो भी उपनिवेश हों वे मुक्त होने चाहियें। किन्तु यह बात भी है कि इन देशों के पीछे कोई बल नहीं है। उन में केवल परम्परा का बल है, उनकी अन्दरूनी ताकत समाप्त हो चुकी है। एशिया में शेष उपनिवेशवाद का अंत अवश्य ही किया जाना चाहिये। किन्तु इन समस्याओं का समाधान करना विषम, दुरुह और पीड़ित संसार में हमें बड़े सोच समझ कर करना होगा। नारे लगाने और चिल्लाने से कुछ नहीं होगा।

इस सदन के ऊपर एक महान् उत्तरदायित्व है। इसलिये इस सदन से मेरा निवेदन है कि विदेशी-नीति को वह साधारण सफलता अथवा असफलता की कसौटी पर न परखें क्योंकि आज की दुनियां में किसी भी राज्य की वैदेशिक नीति की सफलता अथवा असफलता इस दुनियां की ही सफलता अथवा असफलता है। कोई भी नहीं कह सकता कि आगामी कुछ वर्ष शांतिमय निकल जायेंगे अथवा संकट बरस पड़ेगा। मेरी या आपकी नीति कुछ नहीं कर सकती। जब भी संकट आएगा, समस्त विश्व पर आयेगा। फिर भी, हमारी नीति तो यही होनी चाहिये कि जहां तक हो सके इस संकट को रोका जाए और यदि यह आ ही पड़े तो ऐसी स्थिति अपनाई जाए जब हम उसको रोक सकें।

मैं चाहता हूं कि एशियाई देश युद्धलोलुप देशों के समक्ष यह स्पष्ट कर दें कि चाहे जो

कुछ भी हो, वे युद्ध क्रीआंगन में नहीं घुसेंगे वे युद्ध में भाग न लेकर उसे अन्य क्षेत्रों तक ही सीमित कर देने का प्रयत्न करेंगे। मैं यह भी चाहता हूं कि हम यह घोषित कर दें तथा अन्य देशों से भी इस बात की घोषणा करवाने का प्रयत्न करें कि आजकल के भयानक शस्त्रों का प्रयोग हम नहीं करेंगे।

तो, इस भयानक विपत्ति की ओर बढ़ते हुए संसार को हम किस प्रकार बचा सकते हैं ? यह कोई सुगम कार्य नहीं है। जब कि संसार दो ज़बरदस्त विरोधी भावनाओं का शिकार हो रहा हो तो आप उन में से किसी गुट के साथ मिलकर उसकी रक्षा नहीं कर सकते। आपको शांत चित्त होकर शांत भावना से कार्य करना है जिससे कि आपकी आवाज़ अधिक लोग सुनें। आप को उनकी उखड़ी हुई उत्तेजित भावनाओं को शांत करना है और इसके लिये आपको उनमें अपने प्रति विश्वास की भावना भरनी होगी। उनकी बुराई करके तथा उनसे यह कह कर उसके लिये उन्हें दंड दिया जाना चाहिये, यह काम नहीं हो सकता इससे वे शांत नहीं होंगे। मेरा यह तात्पर्य नहीं कि आप बुरी चीज़ की निन्दा न कीजिये। किंतु उनकी कमज़ोरियां बताने की अपेक्षा स्वयं अपनी कमज़ोरियों की ओर ध्यान देना अधिक अच्छा है। अतएव मेरा निवेदन है कि मैं इसी कसौटी पर वैदेशिक नीति आधारित करता हूं। चाहे आप इसे तटस्थता कहें अथवा कुछ और किंतु मैं नहीं समझता कि यह तटस्थता है। युद्ध होने की दशा में हम तटस्थ रहेंगे। शीत युद्ध में भी हम निश्चय ही तटस्थ हैं। कुछ भी हो हम युद्ध में भाग लेने नहीं जा रहे हैं।

सदन में चर्चा के दौरान में बार-बार इस बात को ज़ोर देकर कहा गया कि हम आंग्ल-अमरीकी गुट के साथ मिल गये हैं। इसमें सन्देह नहीं कि गत कुछ वर्षों में हमारे आर्थिक बन्धन इंग्लैंड और अमरीका आदि पच्छिमी देशों के साथ अधिक दृढ़ रहे हैं। किंतु यह चीज़ हमें अपनी आज़ादी प्राप्त करने पर परम्परा से मिली है और जब तक कि हम इस संबंध को बिलकुल तोड़कर अन्य दूसरी जगह दूसरे संबंध स्थापित न करें तब तक हमें इन्हीं संबंधों को कायम रखना पड़ेगा। हम पृथक रूप से तो रह नहीं सकते। हमें कुछ चीज़ों की आवश्यकता है जो हमें दूसरे देशों से मंगानी ही होंगी। इसीलिये हमें यह संबंध ज़ारी रखना पड़ा। इन संबधों को तोड़कर अन्य संबंध स्थापित करने की दलील नहीं पेश कर सकता है जिसका उस ओर झुकाव हो और जो तर्क से काम न लेकर उत्तेजित भावनाओं से काम ले रहा हो।

इसमें संदेह नहीं कि दूसरे देशों पर निर्भर रहने में खतरा और जोखिम है। किंतु फिर भी यह सत्य है कि कोई देश जो भारत की स्थिति में हो, बिना अन्य देशों पर निर्भर रहे जीवित नहीं रह सकता। हम अभी काफ़ी औद्योगीकृत नहीं हैं। बहुत सी महत्वपूर्ण वस्तुओं का हम उत्पादन नहीं करते। अपनी भूमि, वायु अथवा नौ सेना की आवश्यकता हमें बाहर से आयात करके पूरी करनी पड़ती हैं। जब तक हम ये चीज़ें स्वयं उत्पन्न न करने लग जायें तब तक वे बाहर से मंगानी ही होंगी। हम ये चीज़ें कुछ खास देशों से इसलिये मंगाते हैं कि इस में हमें आसानी होती है, क्योंकि हमारा व्यापार और वाणिज्य वहीं से होता चला आया है। हम सोवियत रूस अथवा अन्य देशों से भी जो माल वे दे सकते हैं लेने की तैयार हैं और उन्हें अपना माल भेजने को तैयार हैं किंतु तथ्य यह है कि अमेरिका, इंग्लेंड अथवा फ्रांस से हमारे लिए सामाना मंगाना अधिक आसान है।

हमारे शस्त्रास्त्रों का ही मामला लीजिये। वे हमें विरासत में मिले हैं। उनका एक

[श्री जवाहरलाल नेहरु]

विशिष्ट स्वरूप है । इसके पीछे वर्षों की ब्रिटिश परम्परा है । हमारी सेना इन्हीं शस्त्रों में प्रशिक्षित है । क्या आप यह समझते हैं कि हम इस सबको समाप्त करके फिर से नये सिरे से आरम्भ करें ? इससे हमारी उत्कृष्ट सेना की शक्ति नष्ट-भ्रष्ट हो जायगी । हमें इसकी वही परम्परा कायम रखनी पड़ेगी जिस पर इसका निर्माण हुआ है ।

कुछ माननीय सदस्यों ने कहा कि आप ब्रिटिश परामर्शदाताओं को क्यों बुलाते हैं ? जर्मन अथवा जापानी परामर्शदाताओं को क्यों नहीं बुलाते ? बात यह है कि हमारा संगठन तंत्र एक विशिष्ट तरीके पर, एक विशिष्ट प्रणाली पर कार्य कर रहा है । हमारा एक विशिष्ट प्रकार का उपकरण है, भिन्न प्रकार की मशीनें हैं । इन भिन्न उपकरणों पर आप ऐसे लोगों को परामर्शदाताओं के रूप में कैसे बुला सकते हैं जिन के विचार तंत्र का आधार भिन्न उपकरण है । हमें तब तक उसी ही प्रकार की पद्धति पर चलना पड़ेगा जब तक कि हम उसे पूर्णतया बदल न डालें ।

हमने एक मैत्रीपूर्ण तथा सहकारी ढंग से आज़ादी प्राप्त की थी । उसके बाद भारत एक सर्व प्रभुत्व सम्पन्न गणतन्त्र बन गया । बाद को इसका भी प्रश्न उठा कि हम राष्ट्रमंडल में रहें या न रहें । गणतंत्र भारत संवैधानिक रूप के किसी भी प्रकार इंग्लैंड से बद्ध नहीं है । इंग्लैंड अथवा अन्य देशों से हमारा सिवाय आर्थिक अथवा सांस्कृतिक के और कोई संबंध नहीं है । मैं डा० मुखर्जी से यह पूछना चाहता हूं कि चार वर्ष पहले क्या बात थी और इन चार वर्षों से ऐसा क्या अन्तर आ गया जिससे हमारा राष्ट्रमंडल से अलग हो जाना आवश्यक हो गया हो ? वे देश अपनी प्रतिष्ठा और शक्ति के अनुसार कार्य करते हैं । हम इस बात के लिय मुक्त हैं कि किसी देश से संबंध स्थापित करें अथवा न करें । राष्ट्रमंडल से जो हमारा संबंध है वह किसी प्रकार हमें किसी चीज़ से तनिक भी बाधित नहीं करता और इस सम्बन्ध में गत तीन चार वर्षों में कोई भी अन्तर नहीं आया है । इससे हमें कुछ लाभ ही हुए है । यदि मुझ से कहा जाता है कि 'देखिये दक्षिणी अफ्रीका और लंका में क्या हो रहा है, वे राष्ट्रमण्डल के सदस्य हैं और फिर भी आप इस बात को सहते चले जा रहे हैं" तो मेरा कहना यही है कि इसी कारण से तो मैं राष्ट्रमंडल में रहना चाहता हूं । राष्ट्रमण्डल में रहते हुए हम उन पर अधिक प्रभाव डाल सकते हैं । यदि कुछ माननीय सदस्यों के दिल में यह ख्याल हो कि उन के साथ हमारी कुछ मिली-जुली युद्ध अथवा रक्षा-सम्बन्धी नीतियां हैं तो मैं उन की ग़लतफ़हमी दूर कर दूं कि ऐसा बिल्कुल नहीं है । राष्ट्रमण्डल में हम ने कभी भी मिल कर अथवा पृथक रूप से रक्षा-सम्बन्धी नीतियों पर विचार नहीं किया है ।

जो चीज़ें हमें विरासत में मिली हैं उन में से एक चीज़, जिस पर विरोधी दल के माननीय सदस्यों ने कोई आपत्ति नहीं उठाई है, और जो मैं समझता हूं मानसिक अधीनत्व का द्योतक है, अंग्रेज़ी भाषा है । विरोधी दल के लोगों से मुझे इस सम्बन्ध में कोई आवाज़ नहीं सुनाई दी कि हम भाषा के मामले में आंग्ल-अमरीकी गुट के अधीनस्थ हैं । मुझे इस सम्बन्ध में तनिक भी सन्देह नहीं है कि अंग्रेज़ी भाषा सब से बड़ा कारण है जो हमें आंग्ल-अमरीकी गुट से बांधे हुए है । अंग्रेज़ी भाषा के कारण अनिवार्य रूप से ही हम उनके विचारों, उन के कार्यों, उन की पुस्तकों, उनके अख़बारों, उन के सांस्कृतिक स्तरों के अधिक निकट हैं, जब कि शेष जगत जिस के साथ हम भाषायी रूप से सम्बद्ध नहीं हैं हम से दूर हैं । और आश्चर्य की यह बात है कि विरोधी दल के

सदस्य प्रत्येक आंग्ल-अमरीकी चीज़ की निन्दा करते हैं, उसकी भी जिस से हमें लाभ होता है किन्तु अंग्रेज़ी भाषा को वे समूची ही निगल जाते हैं जो अन्ततोगत्वा हमें उन देशों से बांधे हुए है। मुझे अंग्रेज़ी भाषा से कोई द्वेष नहीं है। किन्तु मेरा तर्क यह था कि कुछ चीजें हमें विरासत में मिली हैं और एकाएक उन से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेना ठीक नहीं है। इसी लिये हम ने अंग्रेज़ी को धीरे धीरे बदलने और अपनी भाषा को शनैः शनैः उस का स्थान देने का उपबन्ध किया है। इस लिये इंगलैन्ड अथवा अमेरिकी प्रत्येक चीज़ पर इस प्रकार सन्देह करना ठीक नहीं है।

सदस्यगण हाल के इतिहास से परिचित हैं। उन्हें ज्ञात होगा कि किस प्रकार बड़े बड़े राष्ट्रों ने अपने अन्य राष्ट्रों के साथ सम्बन्धों में पलटा खाया। गत महायुद्ध में ही सोवियत रूस नात्सी जर्मनी के साथ मिल गया; और कुछ समय पश्चात् ही जर्मनी ने रूस पर आक्रमण कर दिया और रूस को जर्मनी से बड़े भयानक युद्ध में रत होना पड़ा। यहां विरोधी दल के सदस्यों के मुख से कभी रूस-जर्मन मैत्री की आलोचना करते नहीं सुना।

जहां तक हमारी नीति का प्रश्न है, इस तथ्य के बावजूद भी कि हमारा व्यापार अधिकतर इंगलैंड और अमरीका से चलता है, हम उन से सहायता लेते हैं, फिर भी हम ने किसी गुट के साथ गठबन्धन नहीं किया है। हम अपनी नीति पर दृढ़ रहे हैं। इसके कारण हमें कुछ समय के लिये वंचित भी होना पड़ा किन्तु फिर भी हम ने किसी से भीख नहीं मांगी और अपनी नीति में परिवर्तन नही किया। बिना किसी बन्धन के जो भी सहायता हमें दी जाय वह हम स्वीकार करने को तैयार हैं किन्तु हम अपने को किसी शर्त से नहीं बांध सकते। केवल हमारे एक शब्द से हमें जीवन की बहुत सुविधायें प्राप्त हो सकती थीं। किन्तु हम ने किसी भी प्रकार से बद्ध होना अस्वीकार कर दिया। इस लिये यदि कोई देश यह सोचे कि कुछ चीजें प्राप्त करने के लिये हम स्वयं को बेच देंगे तो मैं कहता हूं कि वह बड़ी ग़लती है। हम अपनी नीति से तनिक भी डिगने वाले नहीं हैं।

डा० लंका सुन्दरम् ने पूछा कि क्या वैदेशिक कार्य मंत्रालय की कोई स्थायी समिति बनाई जायेगी। स्थायी समितियां अंग्रेजों के ज़मानें में एक विशिष्ट रूप से बनाई जाती थीं और उस रूप में स्थायी समितियां अब लाभदायक सिद्ध नहीं हो सकतीं। मैं नहीं कह सकता कि कोई स्थायी समिति नियुक्त होगी अथवा नहीं। यह तो सदन पर निर्भर है कि वह इस की नियुक्ति चाहता है अथवा नहीं। किन्तु मैं इस सदन के माननीय सदस्यों को—विशेषकर विरोधीदल के सदस्यों को —यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि वैदेशिक कार्यों के सम्बन्ध में मैं उन की सलाह का पूर्ण स्वागत करूंगा।

पच्छिमी एटलांटिक के कुछ देशों ने एक एटलांटिक संधि की है। इस से मुझे मतलब नहीं कि कोई देश अपनी रक्षा के लिये क्या करता है। किन्तु इस सन्धि का एक पहलू अब अधिकाधिक स्पष्ट होता जा रहा है। एटलांटिक के इन देशों के इस मैत्री संगठन का प्रारम्भ तो आक्रमण के विरुद्ध आत्मरक्षा की दृष्टि से हुआ था किन्तु अब यह उपनिवेश-शासन को क़ायम रखने का भी एक साधन बनता चला जा रहा है। यह एक गम्भीर बात है। हम इस बात के कट्टर विरोधी हैं। मैं सदन को यह बतलाना चाहता हूं कि हम ने इस समस्या को उतनी ही गम्भीर दृष्टि से देखा है जितना कि सुरक्षा परिषद् द्वारा ट्यूनीशिया के मामले पर चर्चा की जाने की अस्वीकृति को। एशिया का प्रत्येक देश तथा अफ्रीका के बहुत से देश इस पर चर्चा चाहते हैं और फिर भी केवल दो देशों द्वारा इस के विरुद्ध मत दिये जाने पर इस मामले को चर्चा

[श्री जवाहरलाल नेहरु]

में सम्मिलित नहीं किया गया। यह अत्यन्त असाधारण स्थिति है। यदि इसी प्रकार की स्थिति चलती रही तो एक समय आ सकता है जब कि एशिया तथा अफ्रीका के देश यह अनुभव करने लगें संयुक्त राष्ट्र संघ में उन के रहने का कोई लाभ नहीं है, उसके बाहर रह कर ही अधिक प्रसन्न रहेंगे। इस प्रकार का निर्णय बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण निर्णय होगा क्योंकि मेरा यह ख्याल है कि इन दोशों के बावजूद भी संयुक्त राष्ट्र संघ एक आवश्यक प्रयोजन पूरा करता है। मैं इस संस्था को अत्यधिक महत्व देता हूं। मैं नहीं चाहता हूं कि ऐसा हो। किन्तु यह बात मैं दोहरा कर कह देना चाहता हूं कि जिस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ अपने आमूल सिद्धान्तों से डिग कर अप्रत्यक्ष रूप से उपनिदेशवाद का संरक्षक बन गया है यह बड़ी खतरनाक बात है। शान्ति के इस संगठन को कुछ सदस्य युद्ध का साधन बनाये हुए हैं। इस संगठन की स्थापन का मूल प्रयोजन दूसरा ही था और हम ने इस को संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों के सम्मुख लाने का प्रयत्न किया है। मैं समझता हूं कि हमारा उन पर कुछ प्रभाव भी पड़ा है। हम एक उत्तरदायी सरकार हैं और उत्तरदायित्वपूर्ण तरीके से कार्य करना चाहते हैं। बाज़ारू स्थान में खड़े हो कर चिल्लाना वर्तमान कूटनीति का क़ायदा नहीं है। सार्वजनिक सभाओं में चिल्लाने और संकल्प पास करने तथा हाथों में बड़े बड़े झंडे लिये फिरने को ही मेरे विरोधीदल के माननीय सदस्य कदाचित् वर्तमान कूटनीति समझते हैं।

कुछ माननीय सदस्यों ने संसद् भवन पर यूनियन जैक (अंग्रेजी झंडा) फहराने का ज़िक्र किया। दो या तीन वर्ष पूर्व हम ने विशेष शिष्टाचार के नाते यह तय किया था कि वर्ष में एक दिवस पर हम अपनी कुछ महत्वपूर्ण इमारतों जैसे सचिवालय पर यूनियन जैक फहराने की अनुमति देंगे। उस समय संसद् भवन पर यह झंडा फहराने का कोई प्रश्न नहीं था क्योंकि तब संसद् की बैठक नहीं हो रही थी। मैं यह स्वीकार करता हूं जब मैं ने संसद् भवन पर यह झंडा देखा तो मुझे भी आश्चर्य हुआ क्योंकि मुझे इसके सचिवालय पर होने की आशा थी। दो वर्ष पूर्व जिस व्यक्ति को इस सम्बन्ध में निदेश दिया गया था उस ने कदाचित् इसे गलत समझा। अब आगे से संसद् भवन पर सिवाय भारतीय झंडे के कोई झंडा नहीं फहराया जायगा।

कोरिया के विषय में भी मैं एक शब्द कहना चाहता हूं। यह दुर्भाग्य की बात है कि महीने पर महीने गुज़रते जा रहे हैं और शान्ति-वार्ता वहीं अटकी हुई है। शान्ति स्थापना के प्रयोजन से हम ने भी सम्बन्धित पक्षों से निकट सम्पर्क बनाये रक्खा है। किन्तु दक्षिणी कोरिया में इस समय जो बातें हो रहीं हैं वे बड़ी अनुचित हैं। वहां के प्रेसीडेंट सिगमेनरी जैसे व्यक्ति का इस प्रकार कार्य करना अत्यन्त अनुचित है। वहां वे ही बातें हो रहीं हैं जिन के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र संघ आज नींव पर खड़ा है।

मुझे खेद है कि वादविवाद के दौरान में आये हुए समस्त मदों को मैं इस समय यहां नहीं ले सकता। किसी अन्य अवसर पर मैं उन्हें लूंगा। सदन का मैं आभारी हूं कि मेरा भाषण ध्यानपूर्वक पढ़ा।

उपाध्यक्ष महोदय : अब मैं कटौती प्रस्ताव ४२० को सदन के समक्ष मतदान के लिये रखता हूं।

सदन में मत विभाजन हुआ।

पक्ष में ७२ मत, विपक्ष में २९६ मत।

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

उपाध्यक्ष महोदय : अब मैं अन्य सब कटौती प्रस्तावों को सदन के समक्ष रखता हूं।

प्रस्ताव अस्वीकृत हुए।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है कि :

"३१ मार्च १९५३ को समाप्त होने वाले वर्ष में आदेशपत्र के स्तम्भ दो में उल्लिखित मांग संख्या २२, २३ तथा २४ के निमित्त जो व्यय होगा उस की पूर्त्ति के लिये उक्त आदेशपत्र के स्तम्भ तीन में तदनुरूप दिखाई गई अन्यान्य-परिमाण तक की राशियां भारत की संचित निधि में से राष्ट्रपति को दी जायें।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

इस के पश्चात् सदन की बैठक शुक्रवार १३ जून, १९५२ के सवा आठ बजे तक के लिये स्थगित हो गई।